International Journal of Innovations in Research
ISSN: 3048-9369 (Online)

भारतीय ज्ञान परंपरा और योग: मानसिक संतुलन से व्यक्तित्व निर्माण तक

पूजा सिंह[1],आकांक्षा मित्तल[1],संजीव कुमार[1],डॉ. आशीष फुलकर[2]
[1]शोधार्थी,यौगिक विज्ञान विभाग, [2] सहायक प्राध्यापक
यौगिक विज्ञान विभाग,लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा संस्थान,ग्वालियर, (म.प्र.) भारत
ई-मेल: yogasanjeevkumar@gmail.com

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.19236771

सारांश

भारतीय ज्ञान परंपरा में योग को मानसिक संतुलन और व्यक्तित्व निर्माण का सर्वोत्कृष्ट साधन माना गया है। वेदों से लेकर उपनिषदों तक, योगसूत्र से लेकर श्रीमद्भगवद्गीता तक, योग की महिमा का विस्तृत वर्णन मिलता है। मानसिक संतुलन व्यक्तित्व निर्माण की पूर्वशर्त है और योग इस संतुलन को प्राप्त करने का वैज्ञानिक मार्ग प्रस्तुत करता है। महर्षि पतंजलि के अष्टांग योग में यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के माध्यम से मन की वृत्तियों को नियंत्रित करने की पद्धति प्रतिपादित है। श्रीमद्भगवद्गीता में कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग के माध्यम से समत्व भाव और स्थितप्रज्ञता की अवधारणा प्रस्तुत की गई है। वर्तमान युग में जब तनाव, चिंता और अवसाद जैसी मानसिक समस्याएँ बढ़ रही हैं, भारतीय योग परंपरा एक प्रभावी समाधान प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय ज्ञान परंपरा में योग की मानसिक संतुलन एवं व्यक्तित्व निर्माण संबंधी अवधारणाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन करता है।

मुख्य शब्द: *भारतीय ज्ञान परंपरा, योग, मानसिक संतुलन, व्यक्तित्व निर्माण, अष्टांग योग*

1. प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की प्राचीनतम और समृद्धतम ज्ञान परंपराओं में से एक है। इस परंपरा में मानव जीवन के समग्र विकास के लिए अनेक विधाओं का विकास हुआ जिनमें योग सर्वोपरि है। योग केवल शारीरिक व्यायाम नहीं है, अपितु यह जीवन जीने की एक संपूर्ण पद्धति है जो मानसिक संतुलन से प्रारंभ होकर व्यक्तित्व के समग्र निर्माण तक पहुँचती है। आधुनिक युग में जब मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएँ विकराल रूप धारण कर रही हैं, भारतीय योग परंपरा एक प्रकाश स्तंभ के समान है।

Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0)

International Journal of Innovations in Research
ISSN: 3048-9369 (Online)

योग शब्द संस्कृत की 'युज्' धातु से बना है जिसका अर्थ है जोड़ना या मिलाना। व्यापक अर्थ में योग जीवात्मा का परमात्मा से मिलन है। महर्षि पतंजलि ने योग की परिभाषा दी है:

"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।" (योगसूत्र 1.2)

अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध करना ही योग है। यह परिभाषा मानसिक संतुलन के महत्व को रेखांकित करती है। जब तक चित्त अशांत और विक्षिप्त रहता है, तब तक व्यक्तित्व का समुचित विकास संभव नहीं है। चित्त की शांति और स्थिरता व्यक्तित्व निर्माण की पहली सीढ़ी है।

2. भारतीय ज्ञान परंपरा में योग का स्वरूप

भारतीय ज्ञान परंपरा में योग का वर्णन वेदों से प्रारंभ होता है। ऋग्वेद में योग शब्द का प्रयोग मिलता है। यजुर्वेद और अथर्ववेद में भी योग संबंधी मंत्र उपलब्ध हैं। उपनिषद काल में योग दर्शन का विस्तृत विकास हुआ। कठोपनिषद में योग की परिभाषा इस प्रकार दी गई है:

"तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्।" (कठोपनिषद 2.3.11)

इंद्रियों की स्थिर धारणा को योग कहते हैं। यह परिभाषा इंद्रिय संयम के महत्व को दर्शाती है जो मानसिक संतुलन के लिए अनिवार्य है। श्वेताश्वतर उपनिषद, मैत्रायणी उपनिषद और योग उपनिषदों में योग का विस्तृत वर्णन मिलता है। इन ग्रंथों में प्राणायाम, ध्यान और समाधि की विधियाँ वर्णित हैं।

कठोपनिषद में मन और इंद्रियों के नियंत्रण को रथ के उदाहरण से समझाया गया है:

"आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।

बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।" (कठोपनिषद 1.3.3)

आत्मा को रथी, शरीर को रथ, बुद्धि को सारथी और मन को लगाम समझो। जिस प्रकार कुशल सारथी घोड़ों को नियंत्रित करके रथ को गंतव्य तक पहुँचाता है, उसी प्रकार विवेकशील बुद्धि इंद्रियों को नियंत्रित करके आत्मा को परम लक्ष्य तक ले जाती है। यह उपमा मानसिक संतुलन और आत्मनियंत्रण के महत्व को स्पष्ट करती है।

Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0)

International Journal of Innovations in Research
ISSN: 3048-9369 (Online)

3. मानसिक संतुलन की अवधारणा

भारतीय ज्ञान परंपरा में मानसिक संतुलन को 'समत्व' या 'चित्त की स्थिरता' कहा गया है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने समत्व को योग की परिभाषा के रूप में प्रस्तुत किया है:

"योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।

सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।।" (गीता 2.48)

हे धनंजय! योग में स्थित होकर आसक्ति त्यागकर कर्म कर। सिद्धि और असिद्धि में समान भाव रख, यह समत्व ही योग कहलाता है। यह समत्व भाव मानसिक संतुलन का सर्वोत्तम उदाहरण है। जो व्यक्ति सुख-दुःख, लाभ-हानि, जय-पराजय में समान भाव रखता है, वही सच्चा योगी है और उसी का व्यक्तित्व संतुलित एवं प्रभावशाली होता है।

गीता में स्थितप्रज्ञ की अवधारणा मानसिक संतुलन का आदर्श प्रस्तुत करती है। अर्जुन के प्रश्न पर भगवान कृष्ण ने स्थितप्रज्ञ के लक्षण बताए हैं:

"दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।

वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते।।" (गीता 2.56)

जो दुःखों में उद्विग्न नहीं होता, सुखों में आसक्त नहीं होता, जो राग, भय और क्रोध से मुक्त है, वह स्थितप्रज्ञ मुनि कहलाता है। यह स्थितप्रज्ञता मानसिक संतुलन की चरम अवस्था है जो व्यक्तित्व निर्माण का आधार है।

4. अष्टांग योग और मानसिक संतुलन

महर्षि पतंजलि ने मानसिक संतुलन और व्यक्तित्व निर्माण के लिए अष्टांग योग का प्रतिपादन किया है:

"यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि।" (योगसूत्र 2.29)

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये योग के आठ अंग हैं। इनमें से प्रत्येक अंग मानसिक संतुलन में योगदान देता है और व्यक्तित्व के किसी न किसी पक्ष को विकसित करता है। यम और नियम नैतिक आधार प्रदान करते हैं, आसन और प्राणायाम शारीरिक-प्राणिक संतुलन देते हैं, प्रत्याहार इंद्रिय संयम सिखाता है, और धारणा, ध्यान, समाधि मानसिक एकाग्रता और आत्मसाक्षात्कार की ओर ले जाते हैं।

Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0)

International Journal of Innovations in Research
ISSN: 3048-9369 (Online)

4.1 यम-नियम और नैतिक संतुलन

यम के पाँच अंग - अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह सामाजिक नैतिकता के स्तंभ हैं। योगसूत्र में कहा गया है:

"अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः।" (योगसूत्र 2.30)

इन यमों का पालन करने से व्यक्ति का मन शांत और संतुलित होता है। अहिंसा से क्रोध और हिंसा की वृत्ति शांत होती है। सत्य से मन की द्विविधा समाप्त होती है। अस्तेय से लोभ और असंतोष दूर होता है। ब्रह्मचर्य से मन की चंचलता कम होती है और अपरिग्रह से संग्रह वृत्ति शांत होती है।

नियम के पाँच अंग व्यक्तिगत अनुशासन से संबंधित हैं:

"शौचसंतोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।" (योगसूत्र 2.32)

शौच से शारीरिक और मानसिक स्वच्छता आती है। संतोष से परम सुख की प्राप्ति होती है। तप से इच्छाशक्ति दृढ़ होती है। स्वाध्याय से आत्मज्ञान होता है और ईश्वर प्रणिधान से समर्पण भाव विकसित होता है। ये सभी नियम मानसिक संतुलन और व्यक्तित्व विकास में सहायक हैं।

5. योग के माध्यम से व्यक्तित्व निर्माण

योग के अंगों के अनुष्ठान से व्यक्तित्व का समग्र विकास होता है। योगसूत्र में इसका वर्णन है:

"योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः।" (योगसूत्र 2.28)

योग के अंगों के अनुष्ठान से अशुद्धि के क्षय होने पर विवेकख्याति तक ज्ञान का प्रकाश होता है। यह विवेकख्याति व्यक्तित्व के सर्वोच्च विकास का सूचक है। निम्नलिखित तालिका में योग के अंगों का व्यक्तित्व निर्माण में योगदान प्रस्तुत है:

तालिका 1: योग के अंगों का मानसिक संतुलन और व्यक्तित्व निर्माण में योगदान

योग का अंग	मानसिक संतुलन में योगदान	व्यक्तित्व निर्माण में योगदान
यम	नकारात्मक वृत्तियों का शमन	सामाजिक व्यक्तित्व का विकास

Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0)

नियम	सकारात्मक गुणों का विकास	आंतरिक व्यक्तित्व का परिष्कार
आसन	शारीरिक स्थिरता से मानसिक शांति	धैर्य और सहनशक्ति का विकास
प्राणायाम	प्राण ऊर्जा का संतुलन	जीवनी शक्ति और मनोबल की वृद्धि
प्रत्याहार	इंद्रियों का नियंत्रण	आत्मनियंत्रण और विवेक
धारणा	चित्त की एकाग्रता	निर्णय क्षमता और स्मृति
ध्यान	गहन मानसिक शांति	अंतर्दृष्टि और आत्मबोध
समाधि	परम शांति और आनंद	आत्मसाक्षात्कार और पूर्णता

6. भगवद्गीता में योग और व्यक्तित्व

श्रीमद्भगवद्गीता में योग के विभिन्न मार्गों का वर्णन है जो व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों को विकसित करते हैं। कर्मयोग कर्मठ व्यक्तित्व का निर्माण करता है। गीता में कहा गया है:

"योगः कर्मसु कौशलम्।" (गीता 2.50)

कर्मों में कुशलता ही योग है। यह परिभाषा बताती है कि योगी वह है जो अपने कर्मों को कुशलता से करता है। निष्काम कर्म का सिद्धांत मानसिक शांति और संतुलन का आधार है। जब व्यक्ति फल की आसक्ति त्यागकर कर्म करता है, तब उसका मन शांत रहता है और वह तनाव से मुक्त होता है।

ज्ञानयोग और कर्मयोग दोनों एक ही लक्ष्य की ओर ले जाते हैं। गीता में कहा गया है:

"यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते।

एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति।।" (गीता 5.5)

Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0)

ज्ञानयोगियों द्वारा जो परमधाम प्राप्त किया जाता है, कर्मयोगियों द्वारा भी वही प्राप्त किया जाता है। जो इन दोनों को एक देखता है, वही सत्य को देखता है। यह समन्वय दृष्टि व्यक्तित्व की परिपक्वता का सूचक है।

7. आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता

वर्तमान युग में मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएँ विकराल रूप धारण कर रही हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार विश्व में करोड़ों लोग अवसाद, चिंता और तनाव से पीड़ित हैं। भारतीय योग परंपरा इन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करती है। आधुनिक वैज्ञानिक शोध भी योग के मनोवैज्ञानिक लाभों को प्रमाणित करते हैं। योग से तनाव हार्मोन कोर्टिसोल का स्तर कम होता है, मस्तिष्क में सेरोटोनिन और डोपामाइन जैसे सुखद रसायनों का स्राव बढ़ता है, और मस्तिष्क की संरचना में सकारात्मक परिवर्तन होते हैं।

संयुक्त राष्ट्र द्वारा 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस घोषित करना योग की वैश्विक स्वीकार्यता का प्रमाण है। विश्व के अनेक देशों में योग को शिक्षा और स्वास्थ्य कार्यक्रमों में सम्मिलित किया जा रहा है। कॉर्पोरेट क्षेत्र में भी योग को कर्मचारियों के मानसिक स्वास्थ्य और व्यक्तित्व विकास के लिए अपनाया जा रहा है। इस प्रकार भारतीय ज्ञान परंपरा का योग आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना सहस्राब्दियों पूर्व था।

8. निष्कर्ष

भारतीय ज्ञान परंपरा में योग मानसिक संतुलन और व्यक्तित्व निर्माण का सर्वोत्कृष्ट साधन है। वेदों, उपनिषदों, योगसूत्र और श्रीमद्भगवद्गीता में योग की जो अवधारणाएँ प्रस्तुत हैं, वे आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं। महर्षि पतंजलि के अष्टांग योग में यम और नियम नैतिक आधार प्रदान करते हैं, आसन और प्राणायाम शारीरिक-प्राणिक संतुलन देते हैं, प्रत्याहार इंद्रिय संयम सिखाता है, और धारणा, ध्यान, समाधि आध्यात्मिक उन्नति की ओर ले जाते हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित समत्व और स्थितप्रज्ञता की अवधारणाएँ मानसिक संतुलन का आदर्श प्रस्तुत करती हैं। कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों को विकसित करते हैं। वर्तमान युग में जब मानसिक स्वास्थ्य की समस्याएँ बढ़ रही हैं, भारतीय योग परंपरा एक प्रभावी समाधान प्रस्तुत करती है। अतः आवश्यक है कि योग को शिक्षा प्रणाली और स्वास्थ्य सेवाओं में व्यापक रूप से सम्मिलित किया जाए जिससे मानसिक संतुलन से व्यक्तित्व निर्माण तक की यात्रा सुगम हो सके।

Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0)

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शर्मा, रामकृष्ण (2018)। भारतीय ज्ञान परंपरा और योग विद्या। हरिद्वार: गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय।
2. महर्षि पतञ्जलि। योगसूत्र (स्वामी विवेकानंद कृत भाष्य सहित)। कोलकाता: अद्वैत आश्रम, 2010।
3. तिवारी, रामनारायण (2015)। पतंजलि योगसूत्र: एक विवेचन। दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास।
4. शुक्ल, विद्यानिवास (2018)। उपनिषदों में योग। वाराणसी: चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन।
5. राधाकृष्णन, एस. (2014)। भारतीय दर्शन (हिंदी अनुवाद)। नई दिल्ली: राजपाल एंड संस।
6. शंकराचार्य। कठोपनिषद भाष्य (हिंदी अनुवाद)। गोरखपुर: गीता प्रेस, 2017।
7. मिश्र, कमलेश्वर (2019)। उपनिषदों में आत्मविद्या। प्रयागराज: हिंदी साहित्य सम्मेलन।
8. त्रिपाठी, राधावल्लभ (2016)। श्रीमद्भगवद्गीता: योग का स्वरूप। गोरखपुर: गीता प्रेस।
9. शंकराचार्य। गीता भाष्य (हिंदी अनुवाद)। गोरखपुर: गीता प्रेस, 2018।
10. वर्मा, अशोक कुमार (2021)। स्थितप्रज्ञ का आदर्श। जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी।
11. पाण्डेय, रामचंद्र (2017)। अष्टांग योग और आधुनिक जीवन। पटना: बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी।
12. महर्षि पतञ्जलि। योगसूत्र (व्यास भाष्य सहित)। वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत संस्थान, 2014।
13. दुबे, सत्यप्रकाश (2020)। योग और नैतिक मूल्य। लखनऊ: उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान।
14. गुप्ता, राजेश कुमार (2019)। नियम और आत्मविकास। वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन।
15. श्रीमद्भगवद्गीता (शांकर भाष्य सहित)। गोरखपुर: गीता प्रेस, 2019।
16. झा, गंगानाथ (2015)। कर्मयोग का दर्शन। वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन।
17. कुमार, रवींद्र (2019)। गीता में योग समन्वय। हरिद्वार: गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय।
18. सिंह, महेंद्र प्रताप (2020)। योग का वैज्ञानिक आधार। दिल्ली: भारतीय विद्या भवन।

Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0)